क्या जी.डी.पी. में वृद्धि देश के सम्पूर्ण विकास का सूचक है?

भारत की आत्मा गाँवों में बसती है, यानी 70% ग्रामीण आबादी वाले देश के सम्पूर्ण विकास का जब भी संदर्भ आएगा, गाँवों को प्राथमिकता मिलनी ही चाहिये। सीधे अर्थ में कहूँ तो आत्मनिर्भर और शहरी सुविधाओं से पूर्ण गाँवों की उपस्थिति ही सम्पूर्ण विकास की द्योतक हो सकती है। साथ ही, शहरों में उभरते मध्यम वर्ग की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति भी विकसित भारत का एक आवश्यक अंग होना चाहिये। यह सर्वविदित है कि आँकड़ों में अभी भारत विश्व की सबसे तेज़ी से वृद्धि करने वाली अर्थव्यवस्था बन चुका है और चीन भी फिलहाल जी.डी.पी. प्रतिशत वृद्धि में हमसे पीछे है। अब सवाल यह उठाता है कि पिछली दो दशकों में हुई जी.डी.पी. वृद्धि या भविष्य में होने वाली अपेक्षित तीव्र वृद्धि सम्पूर्ण भारत के विकसित स्वरूप को बयाँ करती है या फिर इससे सिर्फ "इंडिया" ही लाभान्वित हो रहा है और इसके मुकाबले "भारत" कहीं पीछे छूट गया है।

एक सर्वेक्षण के मुताबिक, हमारे देश के सबसे अमीर व्यक्ति मुकेश अम्बानी की आय विश्व के 19 देशों से अधिक है, वहीं तस्वीर का दूसरा पहलू ये है कि देश की 30-35 फीसदी आबादी गरीबी रेखा के नीचे गुज़र-बसर कर रही है, वहीं 30% आबादी कुपोषण से पीड़ित है और 35% लोग अभी तक निरक्षर हैं। क्या इस स्थिति को देश का सम्पूर्ण विकास कहा जा सकता है? दरअसल, सम्पूर्ण विकास का अर्थ बहुत व्यापक है, प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि, जी.डी.पी. वृद्धि, मानव विकास सूचकांक, क्रय शक्ति वृद्धि, शेयर बाज़ार में उछाल इत्यादि मात्र एक पक्ष को दर्शाते हैं, लेकिन फिर भी कई लोगों की नज़र में जी.डी.पी. वृद्धि और मानव विकास सूचकांक काफी हद तक 'एक इकाई के रूप में' देश के विकास को तुलनात्मक रूप से प्रस्तुत करने वाले बेहतर पैमाने हैं।

वैसे, अगर विकास वास्तविक रूप से हो रहा है तो वह ज़मीन पर खुद-ब-खुद दिख जाता है, उसके लिये जी.डी.पी. वृद्धि जैसे आँकड़ों में बाज़ीगरी दिखाने की कोई ज़रूरत नहीं पड़ती, क्योंकि अक्सर देखा गया है कि जी.डी.पी. वृद्धि दिखाकर यह दर्शाया जाता है कि देश आगे बढ़ रहा है।

वैसे, वास्तविकता तो यह है कि जी.डी.पी. वृद्धि को विकास का एकमात्र पैमाना कहना भी उचित नहीं है। अगर इस बात पर गौर किया जाए कि जी.डी.पी. वृद्धि का फायदा किस वर्ग को मिला है, इससे किस हद तक सामाजिक और आर्थिक बदलावा आया है, मानवीय सूचकांक में कितनी वृद्धि हुई है और सर्वांगीण रूप से देश कितना आत्मनिर्भर हो पाया है, तो संभवतः इस बात की पड़ताल हो सकती है कि क्या जी.डी.पी. में वृद्धि को देश के सम्पूर्ण विकास का सूचक माना जाए या नहीं।

जब सकल घरेलू उत्पाद के आकार की बजाय आम लोगों के जीवनयापन के स्तर को देखा जाता है तो देश की स्थिति कुछ और ही नज़र आती है। बिना सामाजिक स्तर पर बेहतर प्रदर्शन किये हम कैसे विकास का दावा कर सकते हैं? इसी प्रकार, अगर सिर्फ प्रति व्यक्ति आय या राष्ट्रीय आय को एक पैमाना मान लें तो खाड़ी देशों की अर्थव्यवस्था में विरोधाभास मिलता है, जो सामाजिक और मानवीय रूप से निचले राष्ट्रों में गिने जाते हैं।

हमारा देश हिन्दू वृद्धि दर की संकल्पना से कब का बाहर आ गया, परंतु गरीबी पर देश के विकास का अभाव सिर्फ आँकड़ों में दिखाई देता है। गरीबी मुक्त भारत का सपना अभी सपना ही है क्योंकि आज़ादी के 80 साल होने को हैं और अभी भी 30-35% आबादी गरीब है। गरीबी में भी क्षेत्रीय विषमता है। बिहार, बंगाल, ओडिशा, झारखण्ड, राजस्थान जैसे राज्य में गरीबों की मौजूदगी ज़्यादा है। बेरोज़गारी भी गरीबी के समान ही जी.डी.पी. वृद्धि के बावजूद देश के विभिन्न भागों में मौजूद है, कहीं कम तो कहीं ज़्यादा। जी.डी.पी. वृद्धि में भी असमानता है- गुजरात, महाराष्ट्र, दिल्ली जैसे अगड़े राज्य जी.डी.पी. में ज़्यादा योगदान देते हैं तो वहाँ विकास के लक्षण (खासकर बेहतर सड़क, स्वास्थ्य सुविधा, शिक्षा, बिजली-पानी की उलब्धता इत्यादि) दिखाई पड़ते हैं क्योंकि बेहतर निवेश के कारण वहाँ पूंजीगत खर्च जनता के लिये सरकार और निजी संस्थाओं द्वारा किये जाते हैं, जिसका लाभ जनता को प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से मिल ही जाता है। परंतु जी.डी.पी. वृद्धि दिखाने वाले राज्यों में भी सुविधाओं की उपलब्धता में असमानता है। साथ ही, जिन राज्यों में जी.डी.पी. वृद्धि एवं निवेश कम होता है, वहाँ विकास के अवसर सिर्फ शहरों के कुछ हिस्सों तक सीमित हो जाते हैं। अतः यह कहना कि देश की जी.डी.पी. वृद्धि समानता बढ़ाती है, ऐसा भी नहीं है।

जी.डी.पी. वृद्धि के बावजूद हमारा मानव विकास सूचकांक वैश्विक स्तर पर अत्यंत दयनीय है। अगर हम अपने नागरिकों को बेहतर शिक्षा, स्वास्थ्य, आवास, पानी, हवा नहीं दे पा रहे हैं तो जी.डी.पी. वृद्धि का कोई औचित्य नहीं रह जाता। मानव विकास सूचकांक 2015 में हमें 188 देशों में 130वें स्थान पर जगह मिली है। इस मामले में हम वैश्विक औसत के भी नीचे हैं। 7-8 फीसदी जी.डी.पी. वृद्धि के बावजूद कई चुनौतियाँ अभी भी बरकरार हैं। इकोनॉमिक टाइम्स ग्लोबल बिज़नेस समिट में प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने भी कहा कि उनके सुधारों का लक्ष्य नागरिकों की ज़िंदगी में बदलावा लाना है अर्थात् "बदलाव के लिये सुधार।"

पुनः प्रति व्यक्ति आय और जी.डी.पी. वृद्धि को अक्सर सरकार के द्वारा खुशहाली के रूप में पेश किया जाता है, परंतु जब सर्फ खुशहाली सूचकांक के रूप में देखा जाए, तो हम बहुत पिछड़े नज़र आते हैं। गौरतलब है कि जी.डी.पी. वृद्धि और प्रति व्यक्ति आय को अगर महँगाई के संदर्भ में देखा जाए, तो यह वृद्धि मात्र मृग मरीचिका ही साबित होती है। कई बार तो नकारात्मक पहलुओं को जी.डी.पी. वृद्धि द्वारा ढकने का भी प्रयास किया जाता है। साथ ही, प्रति व्यक्ति आय, जो कि जी.डी.पी. वृद्धि से ही निर्धारित होती है, वो औसत वृद्धि होती है न कि वास्तविक प्रति व्यक्ति को प्राप्त होती है।

जी.डी.पी. वृद्धि से किसान और मज़दूर वर्ग को शायद ही कोई प्रत्यक्ष या परोक्ष फायदा होता है, हालाँकि दावे ज़रूर किये जाते हैं। उदाहरण के लिये, 1980 के दशक तक 100 रुपए वाले सामान में अनुमानतः मज़दूरी का हिस्सा 25 से 30 रुपए, लागत 50 रुपए और मुनाफा 20-25 रुपए होते थे, पर आज प्रौद्योगिकी और

तकनीक के कारण लागत में गिरावट आई और लागत प्रायः घटकर 30-35 प्रतिशत तक हो गई और मुनाफा बढ़कर 55-56 प्रतिशत हो गया, पर मज़दूरी घटकर 10-15 प्रतिशत पर सिमट गई। संपत्ति का संकेंद्रीकरण कुछ खास वर्ग तक सीमित होता रहा और मज़दूरों और किसानों का शोषण बढ़ गया। इस प्रकार, देश की जी.डी.पी. वृद्धि में मज़दूरों और किसानों का योगदान सर्वाधिक होता है, पर उनकी आय वृद्धि नहीं हो पाती और देश का संतुलित विकास नहीं हो पाता।

जी.डी.पी. वृद्धि का निर्धारण मुख्यतः तीन क्षेत्रों- कृषि, उद्योग और सेवा क्षेत्र के विकास के आधार पर तय होता है। पिछले कुछ वर्षों में जी.डी.पी. में जो भी वृद्धि हुई वो वस्तुतः सेवा क्षेत्र के प्रगति पर टिकी हुई मानी जाएगी क्योंकि कृषि और उद्योग क्षेत्र में प्रायः प्रगति कम रही है। कृषि में तो वृद्धि कुछ नकदी फसलों के उत्पादन पर निर्भर हो चुकी है। तो फिर क्या सिर्फ सेवा क्षेत्र की प्रगति को देश का संतुलित विकास कहा जा सकता है? उदाहरण के लिये, गुडगाँव, जो कि सेवा क्षेत्र का एक प्रमुख केंद्र बन चुका है, यहाँ की प्रगति सिर्फ गुडगाँव (अब गुरुग्राम) के विकसित सेक्टरों और आस-पास के क्षेत्रों में दिखाई पड़ती है, न कि आस-पास के गाँवों और पड़ोस के ज़िलों में। वस्तुतः यह छद्म विकास है।

देश के मध्यम और उच्च वर्ग को ध्यान में रखकर निवेश अवसरों की उपलब्धता, उद्योगों का उत्पादन और कृषक फसलों का चयन भी देश के संतुलित विकास पर प्रश्न चिह्न लगाते हैं। जी.डी.पी. वृद्धि हो रही है, फिर भी कोर्पोरेट जगत सरकारी कर्ज़ों को दबाए बैठा है। बैक के निवेश गैर-निष्पादनकारी परिसंपत्तियों (Non Performing Assets - NPAs) में बदल रहे हैं। एक तरफ देश में अरबपतियों की संख्या बढ़ रही है, तो दूसरी तरफ देश की 75% आबादी 20 रुपए या कम में गुज़ारा कर रही है, हर चौथा भारतीय भूखा है, किसान कर्ज़ के दबाव में आत्महत्या कर रहे हैं।

किसी देश के लोगों की खुशहाली से जी.डी.पी. का कोई रिश्ता नहीं है। खुशहाली सूचकांक में हम नीचे हैं। यूएनडीपी की ताजा रिपोर्ट बताती है कि क्यूबा जैसे देश का जी.डी.पी. नीचा हैं परंतु उसका मानव विकास सूचकांक बहुत ऊँचा है। इसके अलावा, कुछ ऐसे भी देश हैं जैसे अमेरिका और मेक्सिको जिनका जी.डी.पी. तो ऊँचा है पर मानव विकास सूचकांक बहुत अच्छा नहीं है। इसी तरह, कुछ ऐसे भी देश हैं जिनका जी.डी.पी. ऊँचा है और गैर-बराबरी/असमानता अनुपात भी ज़्यादा है। किसी देश का गैर-बराबरी अनुपात वह अनुपात है जो उसके ऊपरी तबके के 10 प्रतिशत लोगों की आमदनी और निचले तबके के 10 प्रतिशत लोगों की आमदनी के बीच में है। वर्तमान में पूंजीवाद पूरे विकास मॉडल पर छाया हुआ है। सम्पत्ति और संसाधन कुछ हाथों में सिमटते जा रहे हैं और बहुसंख्यक आबादी का सीमान्तीकरण हो गया है।

ऊँची जी.डी.पी. वृद्धि दर का असमानता घटने से कोई लेना-देना नहीं है, इसलिये निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि जी.डी.पी. वृद्धि विकास का एक सम्पूर्ण पैमाना नहीं हो सकता, पर विकास के लिये जी.डी.पी. वृद्धि ज़रूरी है।

PDF Refernece URL: https://www.drishtiias.com/hindi/printpdf/is-gdp-increase-indicates-overall-development-of-the-country